मुरे एंड कंपनी

बनाम.

अशोक के.आर. नेवटिया और एएनआर

25 जनवरी, 2000

(जी.बी. पटनायक और उमेश सी. बनर्जी, जेजे.)

न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971:

अवमानना याचिका- पक्षों की मुकदमेबाजी की भावना के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई। धारित गुण: यह, अपने आप में, उठाए गए विवादों के गुणों को प्रभावित नहीं करना चाहिए।

धारा 2(सी) शपथ पर झूठा बयान, अवमाननाकर्ता ने जानबूझकर उच्चतम न्यायालय के समक्ष शपथ पर गलत बयान दिया- यह न्यायालय की अवमानना के समान है।

धारा 2(सी) आपराधिक अवमान-न्याय प्रशासन- हस्तक्षेप करना

प्रतिपादित- क्या व्यक्ति को झूठा बयान देने से निश्चित लाभ मिला हो या नहीं, इसका कोई महत्व नहीं है, यह तय करने में कि उस व्यक्ति ने न्यायालय की अवमानना की है या नहीं-हालाँकि, यह है सज़ा की मात्रा निर्धारित करने के लिए एक सुसंगत कारक है।

धारा 2(सी) और 13-सजा-न्याय के सम्यक अनुक्रम-हस्तक्षेप करना

विस्तार-प्रतिपादित: सजा देने से पहले पर्याप्त हस्तक्षेप आवश्यक है।

धारा 2(सी) और 13-दंड की मात्रा: प्रतिपादित प्रत्येक व्यक्तिगत मामले के विशेष तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है - सामान्य दिशानिर्देश निर्धारित नहीं किये जा सकते है - हालांकि, स्वीकृत मानदंड है: जितना अधिक गंभीर उल्लंघन, उतनी ही गंभीर सजा।

धारा 13-सजा - उच्चतम न्यायालय के समक्ष एक संभावित लाभ प्राप्त करने के लिए शपथपत्र में जानते हुए जान बूझकर झूठे तथ्यों का सकारात्मक दावा-बिना शर्त माफी मांगी गई प्रतिपादित यह, अपने आप में, अवमानकर्ता को बरी/(दोषमुक्त) नहीं करेगा- मामले की परिस्थितियों में प्रत्येक अवमाननाकर्ता पर 2,500 का जुर्माना लगाना न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति करेगा।

शब्द और वाक्यांश:

'न्याय के सम्यक अनुक्रम'' -अर्थ-"न्यायालय की अवमान अधिनियम, 1971 की धारा-13 के संदर्भ में -

याचिकाकर्ता और प्रत्यार्थीयो ने कलकत्ता और कानपुर दोनों में कार्यवाहियां शुरू की और उच्च न्यायालय से निषेधाज्ञा का आदेश जिसमें प्रत्यर्थीयों को उच्च न्यायालय की अनुमति के बिना अचल संपत्तियों को

स्थानांतरित करने या अलग करने या भारग्रस्त करने या उपयोग से रोकने सहित, विभिन्न आदेश प्राप्त किए

हालांकि, प्रत्यर्थियों ने मूल दावे को कलकत्ता से कानपुर स्थानांतरित करने के लिए इस न्यायालय का रुख किया, जिसमें याचिकाकर्ता द्वारा स्पष्टीकरण के लिए एक प्रार्थनापत्र दायर किया गया था और यह इसके संबंध में है, कि प्रत्यर्थियों ने आपत्ति याचिका को निम्नलिखित आशय के एक शपथ पत्र से सत्यापित किया:-

आगे यह कहना गलत है कि याचिकाकर्ता ने किसी भी तरह से न्यायालय द्वारा पारित आदेश की अवज्ञा की है या संपत्ति बेच दी है या किसी भी तरह से सम्पति बेचने के लिए कोई कदम उठाया हो। इसके विपरीत तर्क झूठे एवं मनगंढत हैं।

उपरोक्त कथन को जानबूझकर झूठ बताया गया था और कहा कि गलत कथन जानबूझकर दिया गया था क्योंकि प्रत्यर्थियों को पता था कि संपत्ति उससे बहुत पहले बेच दी गई थी।

इसलिए, याचिकाकर्ता ने इस न्यायालय के समक्ष वर्तमान अवमान याचिका दायर की और शपथ पत्र में अचल संपत्ति की बिक्री से संबंधित तथ्यों के गलत अभिकथनों के लिए प्रत्यर्थियों को नोटिस जारी किया गया। यहां स्पष्टीकरण की कोई दलील नहीं थी और प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित अधिवक्ता ने इस न्यायालय के समक्ष बिना शर्त माफी मांगी।

इस न्यायालय के समक्ष यह प्रश्न उठा कि क्या प्रत्यर्थी द्वारा शपथपत्र में किए गए उक्त झूठे कथन ने वास्तव में न्यायालय के प्राधिकार को अवनत कर दिया है या इस न्यायालय को न्याय प्रशासन में कोई बाधा उत्पन्न हुई है जो इसे न्यायालय अवमान अधिनियम 1971 की धारा 2(सी)(iii) के दायरे में लाता है और यदि उपरोक्त मुद्दे का उत्तर सकारात्मक है, तब उस स्थिति में क्या परिणाम होगा?

इस न्यायालय ने याचिका का निपटारा करते हुए

अभीनिर्धारित: 1. अवमान याचिका पक्षों की मुकदमेबाजी की भावना और एक-दूसरे से आगे निकलने के प्रयास का परिणाम है। हालाँकि, यह अपने आप में, इस न्यायालय को मामले में उठाए गए तर्कों के गुणावगुण के संबंध में किसी निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए प्रेरित नहीं करेगा। [374-जी]

2. न्यायालय अवमान अधिनियम 1971 में न्यायालय की अवमान के लिए दंड देने का अधिकार विधि न्यायालयों को विधि के शासन और न्याय के सुव्यवस्थित प्रशासन को सुनिश्चित करने के उद्देश्यों के लिए दिया गया है। अवमान अधिकारिता का उद्देश्य कानून के न्यायालयों की महिमा और गरिमा को बनाए रखना है क्योंकि लोगों के दिमाग में ऐसी महिमा की छवि को विकृत नहीं होने दिया जा सकता है। कानून की अदालतों द्वारा प्राप्त सम्मान और अधिकार एक सामान्य नागरिक के लिए सबसे बडी

प्रभूति (गारंटी) है और यदि न्यायपालिका के सम्मान को कम किया गया तो समाज का संपूर्ण लोकतांत्रिक ताना-बाना बिगड जाएगा। यह सच है कि न्यायपालिका जो करती है उसके आधार पर लोग न्यायपालिका का मूल्यांकन करेंगे, लेकिन किसी भी प्रकार की हस्तक्षेप की स्थिति, जिसे दूर से भी कानून की महिमा को प्रभावित करने वाला कहा जा सकता है, उससे समाज न्यायपालिका में विश्वास और आस्था खोने के लिए बाध्य है और इस प्रकार, कानून न्यायालय सामान्य रूप से लोगों के विश्वास और भरोसा को खो देगी। [375-ए-सी)

3. यदि यह न्याय के अनुक्रम में बाधा या अवरोध नहीं करती है तो कानून न्यायालयों की ओर से अति-संवेदनशीलता की सराहना नहीं की जा सकती है। कानून की महिमा के उल्लघंन के संबंध में एक न्यायाधीश की ओर से देवदूत सदृश चुप्पी की भी उम्मीद नहीं की जाती है। यह किसी अपराधी को उसके अवमानपूर्ण आचरण या कानून की महिमा में बाधा डालने के लिए दंडित करने के लिए कानूनी न्यायालयों को प्रदान किया गया एक विशेष क्षेत्राधिकार है। न्यायालय के आदेश का उल्लंघन करना या बाधा डालना या बाधा डालने की प्रवृत्ति एक अर्ध-आपराधिक अपराध है, इसलिए सजा देने के मामले में न्यायालयों को अपने दृष्टिकोण में काफी सतर्क रहना चाहिए, भले ही न्यायालय पक्षकार के कार्य या आचरण से अन्यथा संतुष्ट हो। इस प्रकार किसी अवमानकर्ता के विरूद्ध सजा देने के

मामले में न्यायालय का दृष्टिकोण अलग-अलग होता है, जो पूरी तरह से प्रत्येक व्यक्तिगत मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर होता है। सज़ा देने के मामले में कोई सामान्यीकृत दिशानिर्देश नहीं हो सकते हैं और न ही सामान्य सिद्धांतों का एक सेट तैयार किया जा सकता है। न्यायालय को अन्यथा तथ्यों पर इस निष्कर्ष पर पहुंचना चाहिए कि यह कार्य न्याय में बाधा डालने के समान है, जिसे यदि अनुमति दी गई, तो यह हमारे समाज में भी व्याप्त हो जाएगा, केवल तभी इस शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए। [379-डी-एफ]

4.1. हालांकि, यह सच है कि शपथपत्र में किए गए अभिकथन खंडन के रूप में पेश किया गया थे, लेकिन तथ्य यह है कि ऐसा अभिकथन वास्तव में इस न्यायालय के समक्ष एक शपथपत्र में किए गए है। न्यायालयों के समक्ष अभिकथन देने के मामले में पक्षकार जनता को बेहद सावधान और सतर्क रहना चाहिए। हालाँकि क्या प्रतिवादी ने एक निश्चित लाभ प्राप्त किया है या नहीं, यह अधिनियम के तहत अपराध करने के मामले में पूरी तरह से महत्वहीन/सारहीन है, हालांकि यह अवमाननाकर्ता के विरूद्ध लगाए जाने वाले दंड के संदर्भ में एक सुसंगत कारक होगा। [379-जी]

4.2. पूरे मुद्दे और तथ्यों पर एक नजर डालने के बाद, यह प्रतिपादित किया जाना चाहिए कि हम यह प्रत्यर्थी एक निश्चित और जानबूझकर झूठे अभिकथन के कारण अवमान के दोषी ठहराए जाने के

दायित्व से बच नहीं सकते हैं। शपथ पर किया गया अभिकथन मनगढ़ंत और तथ्यों के विपरीत है और उपरोक्त के अलावा किसी अन्य निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कोई अपरिहार्य परिस्थिति मौजूद नहीं है। [380-बी-सी)

अफजल बनाम हरियाणा राज्य [1995] [Supp]. 2 एसीसी 388; रीता मार्कंड बनाम सुरजीत सिंह अरोडा, [1996] 6 एसीसी 14 और सचिव, हैलाकांडी बार एसोसियेशन बनाम आसाम राज्य, [1996] 9 एसीसी 74, को अनुपयुक्त माना गया.

5. एक मामले में सजा दूसरे मामले में सजा के लिए मार्गदर्शक कारक नहीं हो सकती है। सजा का तथ्यों के साथ सह-संबंध होता है और प्रत्येक मामले में जहां सजा दी जाती है, यह शिकायत किए गए कृत्यों का परिणामी प्रभाव के समान होनी चाहिए- उल्लंघन जितना अधिक गंभीर होगा, सजा उतनी ही गंभीर होगी- और हालांकि, निर्धारित सीमा के भीतर यह मामलों में स्वीकृत मानदंड है। [380-डी]

6.1. अधिनियम की धारा 13 में कुछ मामलों में अवमानपूर्ण आचरण के लिए सजा का प्रावधान नहीं है। उसमें इस्तेमाल की गई भाषा अत्यधिक सावधानी और सतर्कता के साथ बरती हुई प्रतीत होती है कि यह पर्याप्त नहीं है कि न्यायालय की कुछ तकनीकी अवमानना होनी चाहिए, लेकिन यह दिखना चाहिए कि अवमानना का कार्य अन्यथा न्याय के सम्यक

अनुक्रम में काफी हद तक हस्तक्षेप करेगा, जिसे "न्याय के सम्यक प्रशासन" के समान माना है। [380-ई-7]

6.2. धारा 13 में प्रयुक्त शब्द 'न्याय के सम्यक अनुक्रम धारा 2(सी) के उप-खंड (ii) या (iii) में प्रयुक्त शब्दों 'न्यायिक कार्यवाही के सम्यक अनुक्रम' या 'न्याय प्रशासन' की तुलना में व्यापक है। धारा 2(सी) और 13 के संबंध में यह साफ है कि कानून न्याय के अनुक्रम या कानून की उचित प्रक्रिया में किसी भी हस्तक्षेप के तथ्य के संबंध में स्थिति का आकलन करने के लिए न्यायालय पर दायित्व डालता है। [381-ई; 382-डी]

रचापुड़ी सुब्बा राव बनाम महाधिवक्ता, आंध्र प्रदेश, [1981] ए 2 एससीसी 577, पर भरोसा किया गया।

लीगल रिमेंबरेंसर बनाम मतिलाल घोष, आईएलआर 41 सीएएल 173, संदर्भित।

अटॉर्नी जनरल बनाम टाइम्स न्यूजपेपर्स लिमिटेड, (1973) 3 एलएल ईआर 54, संदर्भित।

7.1. हालांकि यह सच है कि प्रासंगिक तथ्य यहां दिए गए शपथपत्र में कि गए अभिकथनों के माध्यम से कोई भी लाभ या यहां तक कि कोई भी लाभ प्राप्त करने के प्रयास का चित्रण नहीं करते हैं। लेकिन यहां इस तथ्य पर कोई विवाद नहीं है कि मिथ्या व मनगढत अभिकथन शपथपत्र

में है। इस कथन को केवल खंडन मात्र नहीं कहा जा सकता। यद्यपि शपथपत्र में ऐसा प्रतिबिम्बित होता है। शपथपत्र में जानते हुए किसी गलत तथ्य के सकारात्मक दावे को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। यह जानबूझकर किया गया कृत्य है. प्रत्यर्थियों की ओर से दिए गए तर्कों को स्वीकार करना संभव नहीं है, यह कथन बिना इसके आशय को समझे दिया गया है। यह केवल तथ्य का खंडन नहीं है बल्कि सकारात्मक दावा है और इस प्रकार यह झूठ बोलने और यदि संभव हो तो लाभ प्राप्त करने के निश्चित इरादे से किया गया है। किसी न्यायालय के समक्ष दायर शपथपत्र में गलत कथन शामिल करने की इस प्रथा की हमेशा निंदा की जानी चाहिए और इसलिए हम इसे अभिलेख पर ले रहे हैं। तथ्य यह है कि अभिसाक्षी ने वास्तव में इस न्यायालय के समक्ष एक झूठे शपथपत्र की पुष्टि की है, जो स्वाभाविक रूप से गंभीर है और इस तरह उसने स्वयं को इस न्यायालय की अवमान का दोषी ठहराया है जैसा कि यहां पहले बताया गया है। हमारे विचार में, यदि मामले को उचित और प्रभावी तरीके से नहीं निपटाया गया तो यह न्यायालय न्यायालयों की गरिमा बनाए रखने के अपने कर्तव्यों में असफल हो जाएगा। अन्यथा कानून न्यायालय मुकदमा करने वाली जनता के लिए अपनी प्रभाविता खो देंगे। [382-ई-एच)

7.2. उपरोक्त परिप्रेक्ष्य में हम यह दर्ज करना समीचीन हैं कि इस न्यायालय से केवल बिना शर्त माफी मांगने के प्रासंगिक तथ्यों में

अवमानकर्ता को दोषमुक्त नहीं किया जा सकेगा, लेकिन अवमान कृत्य की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, हम 2500 रुपये का जुर्माना प्रत्येक पर लगाना उचित समझते हैं। ताकि प्रत्यर्थी -के के खिलाफ न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति की जा सके, अवमाननाकर्ता भुगतान में चूक करने पर (उनमें से प्रत्येक को) एक महीने के लिए साधारण कारावास भुगतना होगा। जुर्माना, का भुगतान इस न्यायालय के विधिक सेवा प्राधिकरण, जो सुप्रीम कोर्ट विधिक सेवा समिति है, को किया जाएगा। [383-ए-बी]

सिविल मूल क्षेत्राधिकार: अवमानना याचिका (सी) संख्या-378/1998

स्थानांतरण याचिका (सी) संख्या 745/1993।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 129 के तहत।

एस.एस. रे, सुश्री पिंकी आनंद, डी.एन. गोबुर्धन, सुश्री गीता लूथरा, अरविंद कुमार, श्रीमती लक्ष्मी अरविंद, सुश्री सुनीता यादव, एन.पी. मिधा, सी.एस. आश्री और आर.ए. मिश्रा उपस्थित पक्षों के लिए।

न्यायालय का निर्णय सुनाया गया

बनर्जी, जे. हालांकि न्यायिक अतिसंवेदनशीलता की आवश्यकता नहीं है, लेकिन कानून की महिमा के उल्लंघन के संबंध में एक न्यायाधीश की ओर से देवदूत सदृश चुप्पी की भी उम्मीद नहीं की जाती है। देश में न्याय के सम्यक और उचित प्रशासन के लिए आम लोगों में विश्वास की भावना लाने के उद्देश्य से न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 को क़ानून की

किताब में शामिल किया गया है। यह निस्संदेह न्यायालयों के हाथों में एक शक्तिशाली हथियार है और इस प्रकार, इसका उपयोग उचित देखभाल और सावधानी के साथ और व्यापक हित के मामलों में सम्यक न्याय प्रशासन के लिए किया जाना चाहिए।

इस मामले में, इस न्यायालय ने अपने आदेश दिनांक 7 सितंबर, 1998 द्वारा, इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत एक शपथपत्र में अचल संपत्ति की बिक्री से संबंधित तथ्यों के गलत दावे के लिए प्रत्यर्थीयों को नोटिस जारी किया।

संयोगवश, जिस शपथपत्र के बारे में पहले बात की गई थी, वह यहां प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा एक स्थानांतरण याचिका सिविल संख्या 745/93 में एक अन्तवर्ती प्रार्थनापत्र/आवेदन (आईए नंबर 1/94) में प्रत्यर्थी की ओर से दायर किया गया था। यहां याचिकाकर्ताओं द्वारा स्पष्टीकरण के लिए एक प्रार्थनापत्र दिया गया था। तथ्यात्मक पृष्ठभूमि पूरी तरह से सुसंगत नहीं है, लेकिन स्थिति के उचित परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन के प्रयोजनों के लिए यहां नीचे ध्यान दिया जा रहा है।

पक्षों के बीच मुकदमेबाजी का करियर उतार-चढ़ाव भरा होता है। उत्तर प्रदेश के कानुपर और कलकत्ता दोनों में पक्षों द्वारा कार्यवाही शुरू की गई है और विभिन्न आदेश प्राप्त किए गए हैं, जिसमें कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा 14 मई, 1993 को पारित निषेधाज्ञा का आदेश भी शामिल

है, जिसमें प्रत्यर्थियों को याचिका (उच्च न्यायालय याचिका) के पैराग्राफ 34 में वर्णित नामों की अचल सम्पतियों को कलकता उच्च न्यायालय की अनुमति के बिना स्थानांतरित करने या अलग करने या अतिक्रमण करने या लेन-देन करने से रोका गया है।

तथ्यात्मक मैट्रिक्स आगे दर्शाता है कि प्रत्यर्थी, हालांकि, मूल मुकदमे को कलकत्ता से कानपुर स्थानांतरित करने के लिए इस न्यायालय में आये, जिसमें याचिकाकर्ताओं द्वारा स्पष्टीकरण के लिए एक प्रार्थनापत्र दायर किया गया था और कहा कि यह इसके संबंध में है प्रत्यर्थीयों ने आपत्ति याचिका को 9 फरवरी, 1994 को निम्नलिखित आशय के शपथपत्र से सत्यापित किया।

'आगे यह कहना भी गलत है कि याचिकाकर्ता ने किसी भी तरह से न्यायालय द्वारा पारित आदेश की अवज्ञा की है या संपत्ति बेच दी है या किसी भी तरह से संपत्ति बेचने के लिए कोई कदम उठाया हो इसके विपरीत तर्क झूठे और मनगढंत हैं.. "

इस कथन को जानबूझकर झूठ बताया गया था और कहा कि उक्त गलत कथन जानबूझकर दिया गया था क्योंकि प्रत्यर्थी को पता था कि संपत्ति उससे बहुत पहले बेच दी।

अवमान याचिका के समर्थन में उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री रे ने तर्क दिया कि उपरोक्त कथन नहीं हो सकता बल्कि उसे प्रेरित झूठ

कहा जा सकता है और इस प्रकार इसे अत्यंत गंभीरता से लिया जाना चाहिए क्योंकि अन्यथा किसी भी न्यायालय के लिए सही अर्थों में न्याय देना उन लोगों की संतुष्टि के लिए संभव नहीं होगा जो इस दृढ़ आशा के साथ न्यायालयों में आते हैं कि अंततः सत्य की जीत होगी। श्री रे ने तर्क दिया कि जो कोई भी धोखाधड़ी या झूठ का सहारा लेता है, वह न्यायिक कार्यवाही के न्यायालय को विक्षेपित करता है और यह न्याय प्रशासन में हस्तक्षेप के समान है। हालाँकि, ऊपर उठाए गए तर्कों पर ध्यान देने से पहले, 1 अक्टूबर, 1993 को इस न्यायालय द्वारा स्थानांतरण याचिका में पारित आदेश पर ध्यान देना सार्थक होगा। आदेश नीचे दिया गया है:

> "यह याचिका अजंता सर्विसेज प्राइवेट लिमिटेड एवं अन्य बनाम वी. मूरे एंड कंपनी प्रा. लिमिटेड एवं अन्य शीर्षक वाले ओएस 166/93 जो उच्च न्यायालय कलकता में लंबित है के स्थानान्तरण की मांग के लिए है। उपरोक्त दावा 12 मई, 1993 को दायर किया गया था। इससे पहले मुर्रे एंड कंपनी और कुछ अन्य ने सिविल जज, नगर कानपुर न्यायालय में दावा संख्या 649/93 दायर किया था जिसमें प्रतिवादियों को वादी मुरू कंपनी के निर्देशक के रूप में कार्य करने से रोकने, उनकी निजी व कंपनी की कलकता

तथा कानपुर में स्थित सम्पतियों को किसी भी तरीके से बेचने से रोकने तथा भारत में स्थित बैंक खातों के संचालन से रोकने तथा न्यायालयों में लंबित मामलों में कंपनी की ओर से कोई समझौता करने से रोकने के लिए स्थाई निषेघाज्ञा का अनुतोष मांगा था। इसके अलावा, प्रतिवादियों के कब्जे से कंपनी के मामलों से संबंधित सभी कागजात और दस्तावेज वादी कंपनी और कानपूर में दूसरे वादी अशोक कुमार नेवतिया को सौंपने का निर्देश देने के लिए अाज्ञापक निषेधाज्ञा की डिक्री की भी प्रार्थना की गई थी। कलकत्ता का दावा क्रास सूट प्रकृति का है जो कुछ शेयरधारकों द्वारा कंपनी के निदेशक प्रतिवादियों के खिलाफ लगभग एक समान अनुतोष की मांग के लिए है। ऐसा प्रतीत होता है कि कंपनी के दो प्रतिद्वंद्वी समूह एक-दूसरे से आगे निकलने की कोशिश में लगातार मुकदमेबाजी में लगे हुए हैं। ऐसा देखा जा रहा है कि न केवल दावा पहले से कानपुर में दायर किया गया है, बल्कि कंपनी का पंजीकृत कार्यालय भी कानपुर में है। बार में हमें बताया गया कि कंपनी का आयकर रिटर्न भी कानपुर में दाखिल किया जाता है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि दोनों दावे अन्यथा

एक ही न्यायालय द्वारा तय किए जाने योग्य हैं। जैसा कि पहले कहा गया है, सुविधा का संतुलन भी यही सुझाव है कि इन दोनों मुकदमों की सुनवाई के लिए कानपुर में स्थित न्यायालय सबसे सुविधाजनक न्यायालय है। इसलिए, हम इस स्थानांतरण याचिका को स्वीकार करते हैं और निर्देश देते हैं कि ओएस 166/93 की पत्रावली जिसका शीर्षक अजंता सर्विस प्राइवेट लिमिटेड और अन्य बनाम मुर्रे एंड कंपनी पी. लिमिटेड, जो कलकत्ता उच्च न्यायालय में लंबित है, को सिविल जज, नगर, कानपुर में स्थानांतरित किया जाए ताकि यह दावा भी दावा संख्या 649/93 मुर्रे एंड कंपनी प्राइवेट लिमिटेड एंड कंपनी बनाम मदनलाल पोद्दार और अन्य के साथ चलाया जा सके। तदनुसार स्थानांतरण याचिका की अनुमति दी जाती है।"

यहां यह दर्ज करने की आवश्यकता नहीं है कि उपरोक्त आदेश के पारित होने के बाद ही याचिकाकर्ता द्वारा एक अंतरिम आवेदन के माध्यम से स्पष्टीकरण मांगा गया था।

इस प्रकार इस न्यायालय ने स्वयं पक्षकारों की मुकदमेबाजी और एक-दूसरे से आगे निकलने के प्रयास की भावना को माना है। जाहिर है, अवमान के लिए यह आवेदन भी इसका अपवाद नहीं है, लेकिन यह अपने आप में, तब भी इस मामले में न्यायालय को उठाए गए तर्कों/विवादों के गुणावगुण के संबंध में किसी निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए प्रेरित नहीं करेगा। इसलिए, इस न्यायालय के समक्ष मुद्दा यह है कि क्या उपरोक्त कथन ने वास्तव में न्यायालय के प्राधिकार को अवनत कर दिया है या इस न्यायालय को न्याय प्रशासन में कोई बाधा उत्पन्न हुई है, जो इसे 1971 के अधिनियम की धारा 2(सी)(iii) के दायरे में लाता है और यदि उपरोक्त मुद्दे का उत्तर सकारात्मक है, तब उस स्थिति में क्या परिणाम होगा।

अधिनियम 1971 में न्यायालय की अवमान के लिए दंड देने का अधिकार विधि न्यायालयों को विधि के शासन और न्याय के सुव्यवस्थित प्रशासन को सुनिश्चित करने के उद्देश्यों के लिए दिया गया है। अवमान अधिकारिता का उद्देश्य कानून के न्यायालयों की महिमा और गरिमा को बनाए रखना है क्योंकि लोगों के दिमाग में ऐसी महिमा की छवि को विकृत नहीं होने दिया जा सकता है। कानून की अदालतों द्वारा प्राप्त सम्मान और अधिकार एक सामान्य नागरिक के लिए सबसे बडी प्रभूति (गारंटी) है और यदि न्यायपालिका के सम्मान को कम किया गया तो समाज का संपूर्ण लोकतांत्रिक ताना-बाना बिगड जाएगा। यह सच है कि न्यायपालिका

जो करती है उसके आधार पर लोग न्यायपालिका का मूल्यांकन करेंगे, लेकिन किसी भी प्रकार की हस्तक्षेप की स्थिति, जिसे दूर से भी कानून की महिमा को प्रभावित करने वाला कहा जा सकता है, उससे समाज में न्यायपालिका में विश्वास और आस्था खोने के लिए बाध्य है और इस प्रकार, कानून न्यायालय सामान्य रूप से लोगों का विश्वास और भरोसा को खो देंगा।

श्री रे ने अफ़ज़ल बनाम हरियाणा राज्य, [1995] Supp. 2 एससीसी 388, के मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर गहरा भरोसा जताया, जिसमें इस न्यायालय ने माना:

> "इसे हल्के में नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है और झूठे शपथपत्र या मनगढ़ंत दस्तावेज प्रस्तुत करने या दस्तावेजों की कूटरचना करने और उन्हें न्यायालय के रिकॉर्ड के हिस्से के रूप में रखने की प्रवृत्ति संगीन और गंभीर चिंता का विषय है।"

अफ़ज़ल के मामले के अवलोकन को इस विचाराधीन मामले के तथ्यों में पढ़ा जाना चाहिए। निर्णय निम्नलिखित अवलोकन से शुरू होता है:

"इन मामलों के तथ्य धारा 32 के तहत व्यावहारिक प्रक्रिया की प्रभावकारिता के मिश्रित मिश्रण पर ध्यान केंद्रित करते हैं; सत्य के लिए पूर्ण उपेक्षा; तथाकथित अनुशासित पुलिस बल के बीच अनुशासनहीनता, वैज्ञानिक प्रगति के बावजूद जांच के कच्चे तरीकों की दृढ़ता; अधिकारी द्वारा उच्च अधिकारी के जाली हस्ताक्षर करने के लिए अधिकारी का भ्रष्ट आचरण और उन व्यक्तियों की सहभागिता, जिन्होंने न्यायालय के समक्ष रखे गए तथ्यों के विपरीत बात करने के लिए अधिकारियों के साथ कठोर समझौता करके इस न्यायालय का रुख किया। एक वकालत करने वाला अधिवक्ता कोई अपवाद नहीं है। वह शपथपत्र में शपथ लेता है लेकिन उन्हें उल्टफेर करने और इस न्यायालय में दायर शपथपत्र में दिए गए अपने दावों से इनकार करने में थोड़ी सी भी हिचकिचाहट नहीं होती। ये विचलित करने वाले रूझान न केवल नैतिक और आधिकारिक आचरण में अधःपतन इस न्यायालय के लिए गहरी पीड़ा का कारण बनती है, बल्कि अभिलेख पर शपथपत्र साक्ष्य पर पूर्ण निर्भरता को भी कठिन बनाते हैं।

इस न्यायालय ने आगे रिपोर्ट के पैराग्राफ 7 में अवलोकन किया:

> "7. जिला न्यायाधीश की रिपोर्ट से पता चलता है कि तथाकथित अनुशासित पुलिस अधिकारी न केवल अनुशासनहीन पर्याप्त दुस्साहसी हैं कि उन्होंने प्रत्यर्थी-पुलिस

अधीक्षक के फर्जी हस्ताक्षर कर दिए, बल्कि उन्हें यह साबित करने में भी कोई संकोच नहीं है कि कोई कूटरचित जालसाजी नहीं की गई। अहलावत का दिनांकित 5.9.93 का शपथपत्र, जिला न्यायाधीश के समक्ष उनके साक्ष्य और बाद वाले की रिपोर्ट यह साबित करती है कि अहलावत के हस्ताक्षर दिनांक 30.9.93 के शपथपत्र पर जाली थे और यह एक "अपरिष्कृत कूटरचना है जिसकी गहन जांच और कठोर कार्यवाही की आवश्यकता है।"

अफ़ज़ल के मामले (सुप्रा) में दी गई सज़ा निर्णय के पैराग्राफ 33 में अंकित है जिसमें रामास्वामी, जे. ने अवमाननाकर्ताओं को नीचे दिए गए तरीके से सज़ा देने का निर्देश दिया था:

"उपरोक्त चर्चा और निष्कर्ष से सवाल यह है: कि रणधीर सिंह (एएसआई), ईश्वर सिंह (एसआई) और एम.एस. अहलावत (पुलिस अधीक्षक) को क्या सजा दी जानी चाहिए? उनमें से किसी ने भी कोई स्पष्ट स्वीकारोक्ति नहीं की और न ही बिना शर्त पश्चाताप की माफी मांगी। पुलिस अधिकारी, जिन्हें तथाकथित अनुशासित बल माना जाता है, ने बिना किसी झिझक के जानबूझकर मिथ्या रिकार्ड गढकर न्यायालय के समक्ष रखे।

इसलिए, इस प्रवृत्ति पर अंकुश लगाना अत्यंत महत्वपूर्ण है, खासकर, जब वे झूठे शपथपत्र के साथ अभिलेखों को गढने और उन्हें देश के सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष रखने की साहस रखे। उनके आचरण की भ्रष्टता बहुत बड़ी है। एम.एस. अहलावत किसी भी जिम्मेदारी का पद संभालने के लिए अयोग्य हैं। इसलिए, रणधीर सिंह (एएसआई) और ईश्वर सिंह (एसआई) आईपीसी की धारा 193 के तहत दंडनीय होंगे और तदनुसार उन्हें दोषी ठहराया जाता है और क्रमशः तीन महीने और छह महीने की अवधि के लिए कठोर कारावास की सजा सुनाई जाती है। पुलिस अधीक्षक अहलावत, आईपीसी की धारा 193 के तहत दंडनीय हैं। उसने संविधान के अनुच्छेद 129 के तहत दंडनीय इस न्यायालय की कार्यवाही की भी अवमानना कारित की। तदनुसार, उसे दोषी ठहराया जाता है और सजा सुनाई जाती है। आईपीसी की धारा 193 में एक वर्ष की कठोर कारावास की सजा भुगतनी होगी। उसे संविधान के अनुच्छेद 129 के तहत दोषी ठहराया गया और छह महीने की कठोर कारावास की सजा सुनाई गई। दोनों सजाएं एक साथ चलने का निर्देश दिया गया है, कृष्ण कुमार, हेड कांस्टेबल कोइसके बाद अनुकरणीय आचरण दिखाने की चेतावनी के साथ आईपीसी की धारा 193 के तहत आरोप से बरी किया। उसके जमानत मुचलके निरस्त किए गए।

यह उपरोक्त तथ्यात्मक पृष्ठभूमि पर है कि रामास्वामी, जे. ने पीठ के लिए बोलते हुए उपरोक्त टिप्पणी की। हालाँकि, वर्तमान संदर्भ में परिस्थितियाँ उतनी गंभीर या ख़तरनाक नहीं हैं। कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा पारित निषेधाज्ञा का एक आदेश है जो पक्षकारों के मध्य बाध्यकारी आदेश के रूप में लागू है और जब आदेश लागू था, तो कुछ संपत्तियों को अलग कर दिया गया था, लेकिन इस न्यायालय के समक्ष एक शपथपत्र में पुष्टि की गई है, इस प्रभाव का एक कथन है कि किसी भी संपत्ति का निपटान नहीं किया गया है और न ही किसी संपत्ति को बेचने या निपटाने का कोई इरादा है। निःसंदेह, यदि अवमानना याचिका के साथ संलग्न विक्रय विलेख का तथ्य अन्यथा सही है, वहां इस प्रकार एक निश्चित कथन है जो मामलों की वास्तविक स्थिति के विपरीत है जो वास्तव में एक गंभीर मामला है। लेकिन शायद यह उतना गंभीर मामला नहीं है, जितना इस न्यायालय ने अफ़ज़ल के मामले में निपटाया था। ऐसे में इस न्यायालय की उपरोक्त टिप्पणियों का उपयोग विचाराधीन मामले के तथ्यों में नहीं किया जाना चाहिए। यह प्रत्येक व्यक्तिगत मामले के तथ्यों पर निर्भर करता है और इसका सभी संभावित स्थितियों में सार्वभौमिक अनुप्रयोग नहीं हो सकता है। इस प्रकार निर्णय से प्रासंगिक तथ्यों में श्री रे को कोई सहायता नहीं मिलती है।

श्री रे ने इसके बाद रीटा मारकंड बनाम सुरजीत सिंह अरोड़ा, [1996] 6 एससीसी 14 में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया, जिसमें रिपोर्ट के पैराग्राफ 14 में, इस न्यायालय ने पाया कि इसमें किसी भी तरह का संदेह नहीं हो सकता है कि झूठा शपथपत्र दायर करने से प्रत्यर्थी ने न केवल जानबूझकर न्याय प्रशासन में बाधा डालने के प्रयास किए, बल्कि कब्जे देने में देरी करने के अपने प्रयास में सफल रहा, और इसलिए, इसी कारण, इस न्यायालय ने प्रत्यर्थी को न्यायालय की आपराधिक अवमानना का दोषी ठहराया। हालाँकि, सजा के मुद्दे पर विचार करते समय यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि प्रत्यर्थी ने न केवल न्याय प्रशासन में बाधा डालने के जानबूझकर प्रयास किया, बल्कि कब्जा देने में देरी करने के अपने प्रयास में सफल रहा और इस प्रकार इस न्यायालय ने प्रत्यर्थी को आपराधिक अवमानना का दोषी माना और सज़ा के बिन्दू के संबंध में नीचे दिया गया अवलोकन किया गया है। रिपोर्ट के पैराग्राफ 15 में, इस न्यायालय ने कहा:

> "हालांकि प्रतिवादी ने न्यायालय के समक्ष बिना शर्त माफी मांगी थी, लेकिन माफी वास्तविक और प्रामाणिक प्रतीत नहीं हुई, अपने पहले शपथपत्र में भी उसने इसी तरह की बिना शर्त माफी मांगी थी लेकिन झूठ दोहराया कि

उसने परिसर खाली कर दिया है। हालाँकि, अभिलेख से दर्शित होता है कि न्यायालय द्वारा जारी गैर-जमानती वारंट की पालना में उसकी गिरफ्तारी के बाद, प्रत्यर्थी कुछ दिनों के लिए हिरासत में था जब तक कि उसे न्यायालय के आदेशों के तहत जमानत पर रिहा नहीं कर दिया गया। मामले के इस पहलू और इस तथ्य पर विचार करते हुए कि अब उसने वाद परिसर का खाली कब्जा सौंप दिया है, इसलिए उसे फिर से मूल सजा देकर सलाखों के पीछे भेजना जरूरी नहीं है। साथ ही, उसे न केवल उसके द्वारा किए गए गलत काम के लिए बल्कि दूसरों को कठोरता से गलत शपथपत्र पेश करने से रोकने के लिए जुर्माने से दंडित किया जाना चाहिए। इसलिए, उसे 2000 रुपये का जुर्माना देने की सजा दी जाती है, जिसका भुगतान न करने पर उसे एक महीने के लिए साधारण कारावास भुगतना होगा। जुर्माना, यदि वसूल हो जाता है, तो याचिकाकर्ता को मुआवजा की तरह भुगतान किया जाएगा। इस प्रकार नियम को पूर्ण बना दिया गया है।"

इसलिए, ऐसा प्रतीत होता है कि इस न्यायालय ने विचारार्थ मामले के विशिष्ट तथ्यों के कारण और विशेष रूप से इस कारण से गंभीर अपवाद लिया कि वास्तव में अवमाननाकर्ता ने लाभ उठाया था। इस प्रकार मामला तथ्यों के आधार पर भी भिन्न है और उठाए गए तर्कों को कोई सहायता प्रदान नहीं करता है। इसी तरह की स्थिति सेक्रेट्री हैलाकांडी बार एसोसिएशन बनाम असम राज्य एवं अन्य, [1996] 9 एससीसी 74 के मामले में संदर्भ है। जिसमें इस न्यायालय ने माना था कि अवमाननाकर्ता ने न्यायालय को गुमराह करने की दृष्टि से जानबूझकर गलत रिपोर्ट अग्रेषित की थी और इस प्रकार उसने इस न्यायालय को सही निष्कर्ष तक पहुंचने से रोकने का प्रयास करके न्याय के सम्यक अनुक्रम में हस्तक्षेप किया।

संयोग से, विचाराधीन मामले में, यहां स्पष्टीकरण की कोई दलील नहीं है और बिना किसी आपत्ति के प्रत्यर्थीयों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय से बिना शर्त माफी मांगी और इसी परिप्रेक्ष्य में इस माफी पर विचार किया जाना चाहिए कि क्या विचाराधीन मामले में अन्यथा यह उचित और पर्याप्त उपाय है। निःसंदेह, यद्यपि मामला काफी गंभीर है और दस्तावेजी साक्ष्यों की प्रधानता के कारण कथनों के मिथ्या होने के संबंध में बिन्दू मात्र भी संदेह नहीं है। लेकिन चूंकि मामला सिविल न्यायालय में लंबित है, इसलिए जहां तक बिक्री के दस्तावेज का संबंध है,

हम कोई राय व्यक्त नहीं कर रहे हैं और इस तरह मामले में आगे की कार्यवाही केवल शुद्धता की धारणा पर होगी और मिथ्यात्व पर नहीं। हालाँकि, सिविल न्यायालय के अगले आदेशों के अधीन है। लेकिन यह तथ्य बचता है कि क्या इस विशेष कथन ने किसी भी तरह से न्याय के अनुक्रम में बाधा डाली है जिसके कारण प्रत्यार्थियों को कुछ निश्चित लाभ प्राप्त हुआ है। स्थानांतरण आदेश पारित हो चुका है और स्पष्टीकरण प्रार्थनापत्र के संबंध में ही शपथ पत्र में ऐसा अभिकथन किया गया है। जैसा कि ऊपर देखा गया है, यदि यह न्याय के अनुक्रम में बाधा या अवरोध नहीं करते है, तो कानून न्यायालयों की ओर से अति-संवेदनशीलता की सराहना नहीं की जा सकती है। यह किसी अपराधी को उसके अवमानपूर्ण आचरण या कानून की महिमा में बाधा डालने के लिए दंडित करने के लिए कानूनी न्यायालयों को प्रदान किया गया एक विशेष क्षेत्राधिकार है। यह दर्ज करने की आवश्यकता नहीं है कि न्यायालय के आदेश का उल्लंघन करना या बाधा डालना या बाधा डालने की प्रवृत्ति एक अर्ध-आपराधिक अपराध है, इसलिए सजा देने के मामले में न्यायालयों को अपने दृष्टिकोण में काफी सतर्क रहना चाहिए, भले ही न्यायालय पक्षकार के कार्य या आचरण से अन्यथा संतुष्ट हो। इस प्रकार किसी अवमानकर्ता के विरूद्ध सजा देने के मामले में न्यायालय का दृष्टिकोण अलग-अलग होता है, जो पूरी तरह से प्रत्येक व्यक्तिगत मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर होता है। सज़ा देने के मामले में कोई सामान्यीकृत दिशानिर्देश नहीं

हो सकते हैं और न ही सामान्य सिद्धांतों का एक सेट तैयार किया जा सकता है। न्यायालय को अन्यथा तथ्यों पर इस निष्कर्ष पर पहुंचना चाहिए कि यह कार्य न्याय में बाधा डालने के समान है, जिसे यदि अनुमति दी गई, तो यह हमारे समाज में भी व्याप्त हो जाएगा - केवल तभी इस शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए। हालांकि, यह सच है कि शपथपत्र में किए गए अभिकथन खंडन के रूप में पेश किया गया थे, लेकिन तथ्य यह है कि ऐसा अभिकथन वास्तव में इस न्यायालय के समक्ष एक शपथपत्र में किए गए है। न्यायालयों के समक्ष अभिकथन देने के मामले में पक्षकार जनता को बेहद सावधान और सतर्क रहना चाहिए। हालाँकि, क्या प्रतिवादी ने एक निश्चित लाभ प्राप्त किया है या नहीं, यह अधिनियम के तहत अपराध करने के मामले में पूरी तरह से महत्वहीन/सारहीन है, हालांकि यह अवमाननाकर्ता के विरूद्ध लगाए जाने वाले दंड के संदर्भ में एक सुसंगत कारक होगा। इस संबंध में प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने कहा कि कोई बचाव नहीं हो सकता है ना ही प्रत्यर्थी न्यायालय के समक्ष बिना शर्त माफी मांगने के अलावा कुछ भी रखना चाहता है। बिना शर्त माफ़ी की यह दलील स्पष्ट रूप से प्रत्यर्थियों के कहने पर है क्योंकि प्रत्यर्थी नंबर 1 न्यायालय में मौजूद था।

पूरे मुद्दे और तथ्यों पर एक नजर डालने के बाद, हमें लगता है कि हम यह मानने को तैयार हैं कि प्रत्यर्थी एक निश्चित और जानबूझकर झूठे

अभिकथन के कारण अवमान के दोषी ठहराए जाने के दायित्व से बच नहीं सकते हैं। शपथ पर किया गया अभिकथन मनगढ़ंत और तथ्यों के विपरीत है और उपरोक्त के अलावा किसी अन्य निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कोई अपरिहार्य परिस्थिति मौजूद नहीं है।

जहां तक सजा के प्रश्न का संबंध है, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि एक मामले में सजा दूसरे मामले में सजा के लिए मार्गदर्शक कारक नहीं हो सकती है। सजा का तथ्यों के साथ सह-संबंध होता है और प्रत्येक मामले में जहां सजा दी जाती है वह शिकायत किए गए कृत्यों को परिणामी प्रभाव के समान होनी चाहिए -उल्लंघन जितना अधिक गंभीर होगा, सजा उतनी ही गंभीर होगी - और हालांकि, निर्धारित सीमा के भीतर यह मामलों में स्वीकृत मानदंड है।

संयोग से, 1971 के अधिनियम की धारा 13 में कुछ मामलों में अवमानपूर्ण आचरण के लिए सजा का प्रावधान नहीं है और जब यह दर्ज है तो उसमें इस्तेमाल की गई भाषा अत्यधिक सावधानी और सतर्कता के साथ बरती हुई प्रतीत होती है कि जब तक न्यायालय का समाधान नहीं हो जाता है कि अवमान ऐसी प्रकृति का है कि जिस कृत्य की शिकायत की गई है वह न्याय के सम्यक अनुक्रम में पर्याप्तहद तक हस्तक्षेप करता है, किसी भी सजा का सवाल ही नहीं उठता। यह पर्याप्त नहीं है कि न्यायालय की कुछ तकनीकी अवमानना होनी चाहिए, लेकिन यह दिखना चाहिए कि

अवमान का कार्य अन्यथा न्याय के सम्यक अनुक्रम में काफी हद तक हस्तक्षेप करेगा, जिसे "न्याय के सम्यक प्रशासन" के समान माना है। जेनकिंस, सी.जे. ने कलकता उच्च न्यायालय के एक पुराने मामले लीगल रिमेंबरेंसर बनाम मतिलाल घोष और अन्य आईएलआर कलकता 173 में यह माना था:

> "तब यह प्रस्ताव अत्यधिक महत्व का प्रश्न उठाता है, जिसे बिना किसी टिप्पणी के पारित करना मेरे लिए सही नहीं होगा। मैं इस प्रश्न की ओर इंगित करता हूं- कौन सी परिस्थितियां सामान्य तौर पर अवमानना की इस सारांश प्रक्रिया का सहारा लेने को उचित ठहराती हैं।
>
> यह पर्याप्त नहीं है कि न्यायालय की तकनीकी अवमान होनी चाहिए: यह दिखाया जाना चाहिए कि यह संभव था कि प्रकाशन न्याय के सम्यक प्रशासन में काफी हद तक हस्तक्षेप करेगा।"

इस मामले में, अटॉर्नी-जनरल बनाम टाइम्स न्यूजपेपर्स लिमिटेड, (1973) 3 ऑल ईआर 54 लॉर्ड डिप्लॉक के अवलोकन का भी संदर्भ लिया जा सकता है लॉर्ड डिप्लॉक ने कहा:

> "चूंकि प्रतिबद्धता के प्रस्ताव पर विचार करने में न्यायालय का विवेकाधिकार इतना व्यापक है कि वह इस तथ्य के बावजूद कि अवमानना की गयी है खर्चे के साथ प्रस्ताव को खारिज करने का अधिकार देता है, अगर उसे लगता है कि अवमानना इतनी श्रम्य थी कि उसे न्यायालय के ध्यान में लाए जाने को उचित नहीं ठहराया जा सकता। 'न्यायालय की अवमान' की सामान्य अवधारणा के भीतर के आचरण और उस सामान्य अवधारणा के भीतर शामिल आचरण के बीच का अंतर, जिसे न्यायालय मामले की विशेष परिस्थिति में सजा के योग्य मानती है, रिपोर्ट किए गए मामलों के निर्णयों में अक्सर धुंधला हो जाता है। 'तकनीकी अवमान अभिव्यक्ति' एक सुविधाजनक अभिव्यक्ति है जिसका उपयोग कभी-कभी ऐसे आचरण का वर्णन करने के लिए किया जाता है जो पूर्व श्रेणी में आता है लेकिन बाद की श्रेणी से बाहर है; और मैं मेरे महान और विद्वान मित्र

लॉर्ड रीड से सहमत हूं कि ऐसा आचरण जो न्याय के सम्यक प्रशासन में हस्तक्षेप की संभावना के विपरीत वास्तविक जोखिम प्रस्तुत करता है, यह कम से कम एक तकनीकी अवमान है।"

सजा देने के लिए न्याय की प्रक्रिया में पर्याप्त हस्तक्षेप कानूनन आवश्यकता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि धारा 13 में प्रयुक्त शब्द 'न्याय के सम्यक अनुक्रम' धारा 2(सी) के उप-खंड (ii) या (iii) में प्रयुक्त शब्दों 'न्यायिक कार्यवाही के सम्यक अनुक्रम' या 'न्याय प्रशासन' की तुलना में व्यापक है। इस मामले में इस न्यायालय के आर. सुब्बा राव के मामले (रचपुड़ी सुब्बा राव बनाम एडवोकेट जनरल, आंध्र प्रदेश, [1981] 2 एससीसी 577) के निर्णय का संदर्भ दिया जा सकता है। कानून के आशय के उचित मूल्याकंन के लिए, साथ ही धारा 13 व धारा 2(सी) यहां नीचे दी गई है। धारा 13 इस प्रकार है:

"13. कतिपय मामलों में अवमानों का दंडनीय न होना- तत्समय प्रवृत किसी विधि में किसी बात के होते हुए भी- कोई न्यायालय इस अधिनियम के अधीन न्यायालय अवमान के लिए दंड तब तक अधिरोपित नहीं करेगा जब तक उसका यह समाधान नहीं हो जाता है कि अवमान

ऐसी प्रकृति का है कि वह न्याय के सम्यक अनुक्रम में पर्याप्त हस्तक्षेप करता है, या उसकी प्रवृति पर्याप्त हस्तक्षेप करने की हैः

धारा 2 (सी) इस प्रकार है:

2. परिभाषाएँ: इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो-.....

(ग) "आपराधिक अवमानना" से किसी भी बात का (चाहे बोले गए या लिखे गए शब्दों द्वारा या संकेतों द्वारा, या दृश्य रूपणों द्वारा, या अन्यथा) प्रकाशन अथवा किसी भी अन्य ऐसे कार्य का करना अभिप्रेत है-

(i) जो किसी न्यायालय को कलंकित करता है या जिसकी प्रवृति उसे कंलकित करने की है अथवा जो उसके प्राधिकार को अवनत करता है या जिनकी प्रवृति उसे अवनत करने की है; अथवा

(ii) जो किसी न्यायिक कार्यवाही के सम्यक अनुक्रम पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है, या उसमें हस्तक्षेप करता है या जिसकी प्रवृति उसमें हस्तक्षेप करने की है; अथवा

(iii) जो न्याय प्रशासन में किसी अन्य रीति से हस्तक्षेप करता है या जिसकी प्रवृति उसमें हस्तक्षेत्र करने की है अथवा जो उसमें बाधा डालता है या जिसकी प्रवृति उसमें बाधा डालने की है;

इसलिए क़ानून, न्याय के अनुक्रम या कानून की उचित प्रक्रिया में किसी भी हस्तक्षेप के तथ्य के संबंध में स्थिति का आकलन करने के लिए न्यायालय पर दायित्व डालता है।

हालांकि यह सच है कि प्रासंगिक तथ्य यहां दिए गए शपथपत्र में किए गए अभिकथनों के माध्यम से किसी भी लाभ या यहां तक कि कोई भी लाभ प्राप्त करने के प्रयास का चित्रण नहीं करते हैं। लेकिन यहां इस तथ्य पर कोई विवाद नहीं है कि मिथ्या व मनगढंत अभिवचन शपथपत्र में हैं। इस कथन को केवल खंडन मात्र नहीं कहा जा सकता। यद्यपि शपथपत्र में ऐसा प्रतिबिम्बित होता है। शपथपत्र में जानते हुए किसी गलत तथ्य के सकारात्मक दावे को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। यह जानबूझकर किया गया कृत्य है. प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क देने के लिए उन्मत्त प्रयास किया कि यह कथन बिना इसके आशय को समझे दिया गया है, हालाँकि, हम इस निवदेन से प्रभावित नहीं हैं और इस प्रकार इस पर अपनी सहमति दर्ज करने में असमर्थ हैं। यह केवल तथ्य का खंडन नहीं है बल्कि सकारात्मक दावा है और इस प्रकार यह झूठ बोलने और यदि संभव हो तो लाभ प्राप्त करने के निश्चित इरादे से किया गया है। किसी न्यायालय के समक्ष दायर शपथपत्र में गलत कथन शामिल करने की इस प्रथा की हमेशा निंदा की जानी चाहिए और इसलिए हम इसे अभिलेख पर ले रहे हैं। तथ्य यह है कि अभिसाक्षी ने वास्तव में

इस न्यायालय के समक्ष एक झूठे शपथपत्र की पुष्टि की है, जो स्वाभाविक रूप से गंभीर है और इस तरह उसने स्वयं को इस न्यायालय की अवमान का दोषी ठहराया है जैसा कि यहां पहले बताया गया है। हमारे विचार में, यदि मामले को उचित और प्रभावी तरीके से नहीं निपटाया गया तो यह न्यायालय न्यायालयों की गरिमा बनाए रखने के अपने कर्तव्यों में असफल हो जाएगा, अन्यथा कानून न्यायालय मुकदमा करने वाली जनता के लिए अपनी प्रभाविता खो देंगे। इस परिप्रेक्ष्य में हम यह दर्ज करना समीचीन समझते हैं कि इस न्यायालय से केवल बिना शर्त माफी मांगने के सुसंगत प्रासंगिक तथ्यों में अवमाननाकर्ता को दोषमुक्त नहीं किया जा सकेगा, लेकिन अवमाना कृत्य की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, हम 2500 रुपये का जुर्माना प्रत्येक पर लगाना उचित समझते हैं, ताकि प्रत्यर्थीयों -अवमानकर्ताओं के खिलाफ न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति की जा सके, जिसके भुगतान में चूक होने पर वे (उनमें से प्रत्येक को) एक महीने के लिए साधारण कारावास भुगतना होगा। जुर्माना, इस आदेश की तारीख से चार सप्ताह की अवधि के भीतर वसूल किया जाएगा और (इस न्यायालय के विधिक सेवा प्राधिकरण) सुप्रीम कोर्ट विधिक सेवा समिति को भुगतान किया जाएगा।

तदनुसार, अवमान याचिका का निपटारा किया जाता है। खर्चा के बारे में कोई आदेश नहीं।

जहां तक दस्तावेजों की जांच के लिए केंद्रीय जांच ब्यूरो को निर्देश देने की दूसरी याचिका का संबंध है, हमें नहीं लगता कि कोई आदेश पारित करने के पक्ष में है। इस प्रकार, उक्त आवेदन खर्चे के किसी भी आदेश के बिना खारिज कर दिया जाता है।

वी.एस.एस.

याचिका निस्तारित

(यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी श्री जयश्री लमोरिया (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।)